

दिल्ली उच्च न्यायालय : नई दिल्ली

निर्णय की तिथि: 19 अप्रैल 2023

जमानत आवेदन स. 3635/2022

सलीम

.....याचिकाकर्ता

द्वारा: श्री सुदर्शन राजन, श्री हितेन बजाज, श्री रोहित भारद्वाज, श्रीमती समरीन, श्री मो. कमर अली, श्री रमेश रावत एवं श्री महेश कुमार, अधिवक्तागण।

श्री रेबेका एम. जॉन, वरिष्ठ अधिवक्ता (न्याय मित्र) अधिवक्ता के साथ सुश्री प्राविता कश्यप एवं सुश्री अनुष्का बरुआ, अधिवक्तागण

बनाम

रा.रा.क्षे. दिल्ली राज्य व अन्य

.....प्रत्यर्थागण

द्वारा: श्री तरंग श्रीवास्तव, राज्य की ओर से अति.लो.अभि. सह उप.नि. मधु यादव थाना: जैतपुर श्री नितिन सलुजा, अधिवक्ता (डीएचसीएलएससी) संग श्री अंकुर सिन्हा एवं प्र.-2 की ओर से श्री साहिल मोंगिया।

कोरम:

माननीय न्यायमूर्ति श्री अनूप जयराम भंभानी

निर्णय

न्या. अनूप जयराम भंभानी

प्रश्न एवं तथ्यात्मक मैट्रिक्स

क्या पीड़िता के *सुने जाने के अधिकार* में आपराधिक कार्यवाही में पक्षकार - प्रत्यर्थी के रूप में *अभियोजित किए जाने की बाध्यता* शामिल है? इस निर्णय द्वारा इसी प्रश्न का समाधान करने की मांग की गई है।

2. यह समझने के लिए कि प्रश्न किस संदर्भ में उद्भूत होता है, मामले की एक संक्षिप्त पृष्ठभूमि आवश्यक होगी।
3. वर्तमान याचिका दण्ड प्रक्रिया संहिता, 1973 (दं.प्र.सं.) की धारा 482 सहपठित धारा 439 के तहत दायर की गई थी, जिसमें भारतीय दण्ड संहिता 1860 (भा.दं.सं.) की धारा 376 के तहत थाना जैतपुर में दर्ज प्राथमिकी सं. 320/2022 के मामले एवं लैंगिक अपराधों से बालकों का संरक्षण अधिनियम, 2012 (पोक्सो) की धारा 4 के तहत नियमित जमानत की मांग की गई थी।
4. दिनांक 05.12.2022 को सुनवाई की पहली तिथि पर, याचिका पर नोटिस जारी करते समय, यह पाया गया कि विषयगत प्राथमिकी में पीड़िता को मामले में पक्षकार-प्रत्यर्थी बनाया गया था, हालांकि उसका नाम तथा विवरण गुप्त या संशोधित किए गए थे। याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने कहा कि यह इस न्यायालय के रजिस्ट्री के विशिष्ट निर्देशों पर किया गया था। इस संबंध में निबंधक (फाईलिंग) द्वारा आख्या मांगी गई थी। आख्या

दिनांक 05.01.2023 द्वारा, निबंधक ने दं.प्र.सं की धारा 439(1क) तथा दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा जारी दिनांक 24.09.2019 में कार्यप्रणाली दिशानिर्देश का हवाला दिया था यह कहने के लिए कि याचिकाकर्ता को कथित अनुपालन के वर्तमान मामले में पीड़ित को एक पक्षकार-प्रत्यर्थी के रूप में शामिल करने तथा उक्त वैधानिक प्रावधान एवं जारी किए गए व्यावहारिक निर्देशों के कार्यान्वयन के लिए निर्देशित किया गया था। इसके अतिरिक्त, रिपोर्ट में यह भी कहा गया कि "... माननीय न्यायालय द्वारा पहले मौखिक निर्देश दिये गए थे कि पीड़िता की पहचान गुप्त रखने के बाद पीड़िता/परिवादी के पक्षकारों के जापन में प्रत्यर्थी के रूप में सूचिबद्ध किया जाए..." समन्वय न्यायपीठ द्वारा दिए गए एक आदेश का भी संदर्भ दिया गया था जहाँ अपीलार्थी को परिवादी को पक्षकार-प्रत्यर्थी के रूप में शामिल करने की अनुमति दी गई थी। रिपोर्ट में यह भी कहा गया है कि यौन अपराधों की पीड़ितों से संबंधित इस न्यायालय में दर्ज होने वाले सभी मामलों में इसी प्रथा का पालन किया जा रहा था।

वैधानिक पृष्ठभूमि

5. तो, अब तक हमारी न्याय व्यवस्था प्रणाली ने किसी अपराध के अभियोजन के संबंध में पीड़िता की स्थिति को कैसे समझा है?
6. "अपराधियों के अपराध की शुरुआत उनके स्वयं के कष्ट एवं क्लेश से होती हैं... "इन्ही" इन शब्दों को *विधिक प्रतिनिधि के माध्यम से उपस्थित मल्लिकार्जुन कोडगली (मृतक) बनाम कर्नाटक राज्य व अन्य* मामले में

प्रस्तुत किया गया है। सर्वोच्च न्यायालय ने उन बाधाओं पर प्रकाश डाला जो पीड़ितों को अपने ऊपर हिंसा झेलने के बाद आपराधिक न्याय प्रणाली तक पहुंचने में सामना करना पड़ता है। सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि पीड़ितों को अब दरकिनार नहीं जा सकता; तथा यह अभिनिर्धारित किया गया कि पीड़ितों को न्यायालय से अनुमति लिए बिना किसी आरोपी को बरी करने के खिलाफ अपील दायर करने का अधिकार है।

7. पारंपरिक स्थिति से प्रारम्भ करते हुए, जहां केवल राज्य के पास अपराधी को अभियोजित करने का विशेषाधिकार था, इस धारणा के आधार पर कि दंडिक अपराध कई लोगों के खिलाफ किया गया अपराध ही है जो *मल्लिकार्जुन कोडगली (पूर्वोक्त)* में लिए गए निर्णय पर आधारित है, सर्वोच्च न्यायालय ने अब पीड़िता की विकेंद्रित भूमिका का विस्तार उस भूमिका के रूप में कर दिया है जो आपराधिक कार्यवाही के केंद्र में थी।
8. *जगजीत सिंह व अन्य बनाम आशीष मिश्रा उर्फ मोनू व अन्य* मामले के अपने हाल के निर्णय में इसे ध्यान में रखते हुए सर्वोच्च न्यायालय ने पीड़िता के अधिकारों को विशिष्ट मान्यता प्रदान की है कि “पीड़ितों से यह आशा नहीं की जा सकती है कि वे दूर से कार्यवाही देखें और उसका लुप्त उठाएं...”; पीड़ितों के पास“... आपराधिक दुर्घटना होने के बाद प्रत्येक चरण पर सुनवाई का अधिकार विधिक रूप से निहित है...; (उनके पास) जांच के चरण से लेकर अपील या पुनरीक्षण में कार्यवाही के अंत तक निरंकुश भागीदारी का अधिकार है। (जोर दिया गया)

9. इसलिए यह स्पष्ट है कि अपराध के पीड़ित मात्र दर्शक नहीं बने रह सकते हैं, तथा सर्वोच्च न्यायालय के शब्दों में, उनके खिलाफ कथित अपराध के संबंध में शुरू की गई विधिक कार्यवाही में निरंकुश भागीदारी का अधिकार दिया जाना चाहिए।
10. हालांकि, दूसरी ओर यह भी देखा गया है कि जहां तक यौन अपराधों का संबंध है, भा.दं.सं. की धारा 228-क, पोक्सो अधिनियम की धाराएं 23, 33(7) व 37 तथा दं.प्र.सं. की धारा 327(2) व 327(3) के अतिरिक्त यह स्पष्ट वैधानिक आदेश है कि पीड़िता की पहचान गोपनीय रखी जानी चाहिए। इसके अलावा, **निपुण सक्सेना बनाम भारत संघ** में अपने निर्णय में सर्वोच्च न्यायालय ने यौन अपराध के पीड़ितों की गोपनीयता बनाए रखने की आवश्यकता पर व्यापक संभव शब्दों में अन्य बातों के साथ-साथ निम्नलिखित शब्दों में जोर दिया है:

"11. "किसी भी व्यक्ति की पहचान" वाक्यांश को न तो भा.दं.सं. और न ही दं.प्र.सं. परिभाषित करता है। भा.दं.सं. की धारा 228-क स्पष्ट रूप से "नाम या कोई भी बात जिससे व्यक्ति की पहचान उजागर हो सकती है" को छापने या प्रकाशित करने पर रोक लगती है"। यह स्पष्ट है कि न केवल पीड़िता के नाम का प्रकाशन वर्जित है, बल्कि किसी अन्य मामले का प्रकटीकरण भी वर्जित है जिससे ऐसी पीड़िता की पहचान उजागर हो सकती है। हमारा स्पष्ट मानना है कि वाक्यांश "वह मामला जो व्यक्ति की पहचान को उजागर कर सकता है" का अर्थ केवल यह नहीं है कि केवल पीड़िता के नाम का प्रकटीकरण नहीं किया जाना चाहिए, बल्कि इसका

मतलब यह भी है कि पीड़िता की पहचान को उजागर नहीं किया जाना चाहिए। मीडिया में प्रकाशित किसी भी मामले से विधि निर्माताओं का उद्देश्य यह था कि ऐसे अपराधों की पीड़िता की पहचान न हो सके ताकि उन्हें भविष्य में किसी भी तरह के शत्रुतापूर्ण भेदभाव या उत्पीड़न का सामना न करना पड़े।

"12. बलात्कार पीड़िता को समाज में शत्रुतापूर्ण भेदभाव और सामाजिक बहिष्कार का सामना करना पड़ता है। ऐसी पीड़िता को नौकरी, शादी या फिर एक सामान्य जीवन की तरह समाज में घुलने मिलने में भी मुश्किलों का सामना करना पड़ता है। हमारा आपराधिक न्यायशास्त्र साक्षी को उचित सुरक्षा प्रदान करने में असमर्थ है। इसलिए, पीड़िता की सुरक्षा और उसकी पहचान छिपाने की आवश्यकता अधिक होती है। इस संबंध में, हम कुछ तरीकों एवं साधनों का संदर्भ दे सकते हैं जहां पीड़ित का नाम लिए बिना पहचान का प्रकटीकरण किया जाता है। हाल ही में सुर्खियों में आए एक मामले में, पीड़िता का नाम नहीं दिया गया, लेकिन कहा यह गया कि उसने राज्य बोर्ड परीक्षा में टॉप किया था और राज्य का नाम बताया गया था। और इस बार उसका पता लगाने और उसकी पहचान स्थापित करना कोई बहुत मुश्किल कार्य नहीं रहा होगा। दूसरे उदाहरण में, इलेक्ट्रॉनिक मीडिया पर फुटेज दिखाए गए हैं जहां पीड़िता का चेहरा तो धुंधला किया गया है लेकिन उसके सगे संबंधियों एवं पड़ोसियों के चेहरे, गाँव का नाम आदि स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहे हैं। अन्य शब्दों में कहे तो यह पीड़िता की पहचान उजागर करने के समान है। अंततः हमारा मानना है कि कोई भी व्यक्ति पीड़िता का नाम, छाप या प्रकाशित नहीं कर सकता है या ऐसे किसी की तथ्य का प्रकटीकरण नहीं कर सकता है जिससे पीड़िता की पहचान हो सके तथा उसकी पहचान बड़े पैमाने पर लोगों को पता चले।

* * * *

"25. गुरमीत सिंह मामले में दं.प्र.सं. की धारा 327 पर विचार करते हुए (पंजाब राज्य बनाम गुरमीत सिंह, (1996) 2 एससीसी 384) न्यायालय ने इस प्रकार अभिनिर्धारित किया:

"24. ...जहां तक संभव हो, न्यायालयों को यौन अपराध की पीड़िता को आकुलता से बचाने के लिए अभियोक्त्री के नाम का प्रकटीकरण करने से बचना चाहिए, जहां तक संभव हो, **अपराध की पीड़िता की गोपनीयता बरकरार रखी जानी चाहिए।** वर्तमान मामले में, विचारण न्यायालय ने अपील के तहत अपने आदेश में पीड़िता के नाम का बारंबार प्रयोग किया है, जबकि वह उसे अभियोक्त्री कह कर निर्दिष्ट कर सकता था। हमें इस पहलू पर और कुछ कहने की आवश्यकता नहीं है और हम आशा करते हैं कि विचारण न्यायालय दं.प्र.सं. की धारा 327(2) एवं (3) के प्रावधानों का उदारतापूर्वक सहारा लेगा। बलात्कार के मामलों की बंद कमरे में सुनवाई एक नियम होना चाहिए और ऐसे मामलों में खुली सुनवाई एक अपवाद होना चाहिए।"

* * * *

"50. उपयुक्त चर्चा के माध्यम से, हम निम्नलिखित निर्देश जारी करते हैं:

50.1. कोई भी व्यक्ति प्रिंट, इलेक्ट्रॉनिक, सोशल मीडिया आदि में पीड़िता का नाम नहीं छाप सकता या प्रकाशित नहीं कर सकता या दूर-दूर तक ऐसे किसी भी तथ्य का प्रकटीकरण नहीं कर सकता, जिससे पीड़िता की पहचान हो सके और जिससे उसकी पहचान बड़े पैमाने पर जनता को पता चले।

50.2. ऐसे मामलों में जहां पीड़िता की मृत्यु हो चुकी है या मानसिक रूप से विक्षिप्त है, पीड़िता का नाम या उसकी

पहचान निकटतम रिश्तेदार की अनुमति के बावजूद भी प्रकट नहीं की जानी चाहिए, जब तक कि उसकी पहचान प्रकट करने को उचित ठहराने वाली परिस्थितियां मौजूद न हों, जिसका निर्णय सक्षम न्यायालय द्वारा लिया जाएगा, जो वर्तमान में सत्र न्यायाधीश है।

50.3. दं.प्र.सं. की धारा 376, 376-क, 376-कख, 376-ख, 376-ग, 376-घ, 376-घक, 376-घख या 376-ङ के तहत अपराधों और पोक्सो के तहत अपराधों से संबंधित प्राथमिकी सार्वजनिक क्षेत्र में दर्ज नहीं की जाएगी।

50.4. यदि कोई पीड़िता दं.प्र.सं. की धारा 372 के तहत अपील दायर करती है, तो पीड़िता के लिए अपनी पहचान का प्रकटीकरण करना आवश्यक नहीं है तथा अपील को विधि द्वारा स्थापित तरीके से निपटाया जाएगा।

50.5. पुलिस अधिकारियों को उन सभी दस्तावेजों को, जिनमें पीड़िता के नाम का प्रकटीकरण किया गया है, जहां तक संभव हो, एक सीलबंद लिफाफे में रखना चाहिए और इन दस्तावेजों को समान दस्तावेजों से बदलना चाहिए, जिसमें सार्वजनिक क्षेत्र में सभी अभिलेखों से पीड़िता का नाम हटा दिया जाए, जिससे उनकी जांच की जा सके।

50.6. जांच अभिकरण या न्यायालय द्वारा पीड़िता के नाम का प्रकटीकरण करने वाले सभी प्राधिकारी भी पीड़िता के नाम और पहचान को गुप्त रखने के लिए बाध्य हैं और जांच अभिकरण या न्यायालय को एक सीलबंद लिफाफे में भेजी जाने वाली रिपोर्ट के अलावा किसी भी तरीके से पहचान प्रकट नहीं करेंगे।

50.7. भा.दं.सं. की धारा 228-क(2)(ग) के तहत मृतक पीड़िता मानसिक रूप से अस्वस्थ पीड़िता की पहचान का प्रकटीकरण करने के लिए करीबी रिश्तेदार द्वारा आवेदन केवल संबंधित सत्र न्यायाधीश को किया जाना चाहिए, जब तक कि सरकार

धारा 228-क(1)(ग) के तहत विचार नहीं करती और ऐसे सामाजिक कल्याण संस्थानों या संगठनों की पहचान के लिए हमारे निर्देशों के अनुसार मानदंड निर्धारित करती है।

50.8. पोक्सो के तहत नाबालिग पीड़ितों के मामले में, उनकी पहचान का प्रकटीकरण विशेष न्यायालय द्वारा केवल तभी किया जा सकता है जब वह बच्चे के हित में हो।

50.9. सभी राज्यों/केंद्र शासित प्रदेशों से अनुरोध है कि वे आज से एक वर्ष के भीतर प्रत्येक जिले में कम-से-कम एक "वन-स्टॉप सेंटर" स्थापित करें।* * * *

(कुछ जोर मूल में; कुछ यहाँ दिया गया)

11. सर्वोच्च न्यायालय के पूर्वगामी निर्णयों की पृष्ठभूमि में, वर्तमान मामले में विचार हेतु प्रासंगिक वैधानिक प्रावधानों पर ध्यान दिया जा सकता है। संदर्भ की सुविधा हेतु इसे नियमानुसार उद्धृत किया गया है:

धारा 2 (बक) दं.प्र.सं. : संदर्भ 'पीड़ित' की परिभाषा

"पीड़ित" का अर्थ उस व्यक्ति से है जिसे उस कृत्य या लोप के कारण क्षति या चोट लगी है, जिसके लिए आरोपित व्यक्ति पर आरोप लगाया गया है तथा "पीड़ित" अभिव्यक्ति में उसके अभिभावक या विधिक उत्तराधिकारी शामिल है;"

दं.प्र.सं. धारा 24(8) : संदर्भ लोक अभियोजक की नियुक्ति

"(8) केंद्र सरकार या राज्य सरकार किसी भी मामले या मामलों के वर्ग के प्रयोजनों हेतु एक ऐसे व्यक्ति को विशेष लोक अभियोजक के रूप में नियुक्त कर सकती है जो कम से कम दस वर्षों तक पेशेवर अधिवक्ता रह चुका हो: बशर्ते कि न्यायालय इसकी अनुमति दे सकता है। पीड़िता को इस उप-धारा के तहत

अभियोजन की सहायता हेतु इस पसंद के एक अधिवक्ता को नियुक्त करना होगा।"

दं.प्र.सं. की धारा 439(1क) : पीड़ित का सुने जाने का अधिकार :

"439. जमानत के संबंध में उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय की विशेष शक्तियाँ - (1)

(1-क) भारतीय दंड संहिता (45/1860) की धारा 376 की उप-धारा (3) या धारा 376-कख या धारा 376-घक या धारा 376-घख के तहत व्यक्ति की जमानत हेतु आवेदन की सुनवाई के समय इत्तिला देने वाला या उसके द्वारा अधिकृत किसी व्यक्ति की उपस्थिति अनिवार्य होगी। (जोर दिया गया)

12. दं.प्र.सं. की धारा 439(1क) की आवश्यकताओं के अनुरूप दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा जारी दिनांक 24.09.2019 के व्यवहार दिशानिर्देशों का प्रासंगिक भाग भी उद्धृत किया जा सकता है :

".....

उपरोक्त प्रावधानों का बेहतर एवं प्रभावी अनुपालन सुनिश्चित करने हेतु माननीय मुख्य न्यायाधीश ने निम्नलिखित दिशानिर्देश जारी किये हैं:-

(क) भारतीय दंड संहिता की धारा 376 या धारा 376-कख या धारा 376-घक या धारा 376-घख के तहत विचारणीय अपराध के अभियुक्त व्यक्ति को जमानत देने से पूर्व, उच्च न्यायालय या सत्र न्यायालय ऐसे आवेदन की सूचना की प्राप्त होने की तिथि से पन्द्रह दिनों के अवधि के भीतर लोक अभियोजक को जमानत हेतु आवेदन का नोटिस देना होगा: तथा

(ख) न्यायालय यह सुनिश्चित करेगा कि जांच अधिकारी ने उपाबंध क के अनुसार लिखित रूप में इतिला देने वाले व्यक्ति या उसके द्वारा अधिकृत किसी व्यक्ति को सूचित कर दिया है कि भारतीय दंड संहिता की उप-धारा (3) धारा 376 या धारा 376-कख या धारा 376-घक या धारा 376-घख के तहत व्यक्ति को जमानत हेतु आवेदन की सुनवाई के समय उसकी उपस्थिति अनिवार्य है। उपाबंध क जांच अधिकारी द्वारा दायर किया जाएगा। ऐसे जमानत आवेदन पर उत्तर/स्थिति आख्या के साथ-साथ न्यायालय इतिला देने वाले व्यक्ति या उसके द्वारा अधिकृत किसी व्यक्ति की उपस्थिति सुनिश्चित करने का पूरा प्रयास करेगा।...

(जोर दिया गया)

अधिवक्ता की प्रस्तुतियाँ

13. प्रश्न पर बेहतर सहायता प्राप्त करने हेतु, इस न्यायालय ने दिनांक 16.01.2023 को सुश्री रेबेका एम. जॉन, विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता को न्याय मित्र के रूप में नियुक्त किया ताकि वे इस न्यायालय को संबोधित कर सकें कि क्या पीड़िता को पक्षकार बनाने की आवश्यकता (या तो वैधानिक या न्यायिक उद्घोषणा द्वारा) है। दं.प्र.सं. की धारा 439(1क) के तहत उन्हें सूचना देने की आवश्यकता से परे पक्षकार-प्रत्यर्थी के रूप में दिल्ली उच्च न्यायालय के व्यवहार दिशानिर्देश दिनांक 24.09.2019 को पढ़ें तथा मामले में उनकी सुनवाई करें।

14. उपरोक्त के आधार पर, इस न्यायालय ने विद्वान *न्याय मित्र*, याचिकाकर्ता के विद्वान अधिवक्ता श्री सुदर्शन राजन; राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान अति.लो.अभि. सुश्री मीनाक्षी दहिया; के साथ साथ शिकायतकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता श्री नितिन सलूजा को भी सुना है।
15. सुश्री जॉन का कहना है कि जैसा कि यह मामला है, इसकी कोई आवश्यकता नहीं है, न तो वैधानिक रूप से और न ही किसी न्यायिक उद्घोषणा के माध्यम से कि किसी पीड़िता को आपराधिक कार्यवाही में पक्षकार-प्रत्यर्थी बनाया जाना चाहिए; हालांकि, इसके अतिरिक्त कुछ मामलों में - जैसे कि यौन अपराध, अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 ('एससी-एसटी अधिनियम') के तहत अपराध, जहां अभियोजन पक्षकार द्वारा समापन आख्या दायर की जाती है, आदि - हालांकि पीड़ितों/शिकायतकर्ताओं/इतिला देने वाले व्यक्तियों को नोटिस जारी करना तथा उन्हें सुनवाई का अधिकार देना अनिवार्य है, लेकिन उन्हें पक्षकारों के रूप में शामिल करने की आवश्यकता नहीं है। सुश्री जॉन इसलिए यह प्रस्तुत करती हैं, कि उपरोक्त स्थितियों से परे, जहां पीड़िता का सुने जाने का अधिकार पहले से ही मान्यता प्राप्त था, *जगजीत सिंह* (पूर्वोक्त) में निर्णय अब यह कहता है कि पीड़िता को आपराधिक कार्यवाही के हर चरण में सुनवाई का अधिकार है; किंतु पीड़िता को पक्षकार-प्रत्यर्थी के रूप में अभियोजित करने की आवश्यकता विधि पर आधारित नहीं है।

16. हालांकि सुश्री जॉन यह भी कहती हैं कि अभियोजित किए जाने का एक संभावित लाभ यह हो सकता है कि पीड़िता को याचिका की विषयवस्तु के बारे में जानकारी होगी, तथा वह इसे अधिक प्रभावी ढंग से प्रतिवादित करने में सक्षम होगी; हालांकि, यह कहते हुए कि यह लाभ पीड़िता को भी दिया जा सकता है यदि पीड़िता को याचिका की प्रति तामील किए जाने की आवश्यकता को शामिल करने के लिए व्यवहार दिशानिर्देशों को थोड़ा सा तोड़ा मरोड़ा जाए।
17. यौन अपराधों जैसे संवेदनशील मामलों में पीड़ितों की पहचान को गुप्त रखने के मुद्दे पर सुश्री जॉन का कहना है कि यदि प्राथमिकी में ही पीड़ित का नाम शामिल है, तो भा.दं.सं. की धारा 228क का कोई अर्थ नहीं रह जाता है, यही कारण है कि इस कलंक पर विचार किया जा रहा है कि पीड़ितों को अक्सर इसका सामना करना पड़ता है, *निपुण सक्सेना (पूर्वोक्त)* में सर्वोच्च न्यायालय ने यौन अपराधों में केस फ़ाइल को गुप्त करने सहित कुछ निर्देश जारी किए हैं। सुश्री जॉन का कहना है कि, कई बार दायर की गई याचिकाओं में पीड़िता का कोई भी गोपनीकरण नहीं होता है; या किसी याचिका के पक्षकारों के ज्ञापन में पीड़िता के माता-पिता/पते का प्रकटीकरण किया गया है; यह उल्लेख करने की आवश्यकता नहीं है कि याचिकाओं के साथ संलग्न दस्तावेज़ अक्सर पूरी स्थिति ब्यान कर देते हैं, अक्सर न केवल पीड़िता के नाम/माता-पिता/पते का प्रकटीकरण करते हैं, बल्कि कभी-कभी पीड़िता की तस्वीरें भी संलग्न कर देते हैं।

18. सुश्री जॉन का कहना है कि यदि किसी पीड़िता को किसी मामले में प्रत्यर्थी पक्षकार के रूप में शामिल किया जाता है, भले ही नाम एवं अन्य विवरण अज्ञात हों, तब भी संभावना अधिक है कि इससे पीड़िता की 'पहचान' हो सकती है, अर्थात् तीसरा व्यक्ति फाइलिंग के विभिन्न हिस्सों में पाए गए विभिन्न तत्वों से पीड़ित की पहचान कर पाने में सक्षम हो सकता है।
19. विद्वान न्याय मित्र द्वारा की गई दलीलों से श्री राजन सहमत हैं तथा कहते हैं कि आवश्यकता केवल पीड़िता को सुनवाई का अधिकार देने की है तथा हालांकि विधि में ऐसी कोई आवश्यकता नहीं है कि पीड़िता को कार्यवाही में एक पक्षकार के रूप में अभियोजित किया जाना चाहिए, पीड़ितों को अक्सर रजिस्ट्री के आग्रह पर ही इस तरह प्रस्तुत किया जाता है।
20. दूसरी ओर, श्री सलूजा का कहना है कि पीड़ितों को याचिकाओं में पक्षकार-प्रत्यर्थी बनाया जाना चाहिए। उनकी मुख्य दलीलें यह हैं कि कई बार पीड़ितों को याचिका दायर करने के बारे में सूचित नहीं किया जाता है तथा इसलिए वे अंतःकालीन राहत के बिंदु पर पहली सुनवाई में पर्याप्त रूप से इसका विरोध करने में असमर्थ होते हैं। श्री सलूजा का सुझाव है कि पक्षकार-प्रत्यर्थी के रूप में पक्षकार बनाने की आवश्यकता को पहचान की रक्षा के साथ संतुलित किया जा सकता है, यौन अपराधों के पीड़ितों के नाम/पते/माता-पिता की पहचान को गुप्त रखने को अनिवार्य करके, ताकि यह सुनिश्चित हो सके कि पीड़ितों को पता है कि एक याचिका दायर की गई है तथा उन्हें याचिका की एक प्रति मिल जाएगी एवं वे इसका प्रतिवाद कर सकेंगे। श्री सलूजा यह

प्रस्तुत करने हेतु कुछ वैधानिक प्रावधानों पर भी भरोसा करते हैं कि चूंकि पीड़ितों, विशेष रूप से यौन अपराधों के पीड़ितों को विधिक सहायता का अधिकार है जो दर्शाता है कि आपराधिक कार्यवाही में उनकी भूमिका है।

21. सुनवाई के दौरान, सुश्री दहिया इस ओर इशारा किया कि **रीना झा** के आदेश दिनांक 25.11.2019 एवं 27.01.2020 के तहत इस न्यायालय की एक खंड न्यायपीठ (जिसमें अधोहस्ताक्षरकर्ता सदस्य था) द्वारा जारी दिशानिर्देशों के अनुसार, दं.प्र.सं. की धारा 439(1क) का आवेदन भा.दं.सं. के तहत इसे केवल निर्दिष्ट यौन अपराधों तक सीमित रखने के बजाय, इसे पोक्सो अधिनियम के तहत मामलों तक बढ़ा दिया गया है; प्रश्न का निर्णय करते समय इसे ध्यान में रखा जा सकता है।

22. विद्वान अति.लो.अभि. ने दं.प्र.सं. की धारा 439(1क) के तहत पीड़ितों/शिकायतकर्ताओं/इतिला देने वाले व्यक्तियों को भेजी जाने वाली आवश्यक सूचना की अनिवार्य प्रकृति पर जोर दिया है, जैसा कि **सुश्री जी (नाबालिग)** में इस न्यायालय की समन्वय पीठ के निर्णयों में निम्नलिखित शब्दों में बताया गया है : *“यह स्पष्ट है कि पीड़िता/शिकायतकर्ता/इतिला देने वाले व्यक्ति को सुना जाना चाहिए। यह विधि का आदेश है।”*, आगे यह देखते हुए कि *“... शिकायतकर्ताओं/इतिला देने वाले व्यक्तियों/पीड़ितों को नोटिस जारी न करना न केवल एक प्रक्रियात्मक चूक है, बल्कि स्पष्ट रूप से स्पष्ट विधायी आदेश के साथ-साथ घोषित एवं स्थापित विधि के भी विपरीत है।”*

चर्चा एवं निष्कर्ष

23. अतः पूर्वगामी चर्चा के संदर्भ में, एक ओर सभी आपराधिक मामलों में भाग लेने के लिए *एक पीड़िता का अकाट्य अधिकार* अपराध से संबंधित कार्यवाही; तथा दूसरी ओर जहां तक यौन अपराधों का संबंध है एक विधिक आदेश भी है कि *पीड़िता की पहचान गोपनीय रखी जानी चाहिए।*
24. तदनुसार इस न्यायालय के लिए यह पता लगाना आवश्यक है कि इन दो विधिक आदेशों को कैसे प्रभावी किया जाना चाहिए, ताकि एक दूसरे को नकार न सके।
25. यह ध्यान दिया जाना चाहिए कि *जगजीत सिंह (पूर्वोक्त)* का आदेश यह है कि पीड़िता को आपराधिक कार्यवाही में अकाट्य सहभागिता का अधिकार है, जिसका अर्थ यह नहीं है कि पीड़िता को अभियोजन अभिकरण के रूप में राज्य को प्रतिस्थापित करना चाहिए; और न ही पीड़िता को कार्यवाही में एक पक्षकार के रूप में अभियोजित किया जाना चाहिए ताकि पीड़िता को सभी पहलुओं में उत्तरदायी बनाया जा सके।
26. इसके अलावा, इस तथ्य पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि दं.प्र.सं. की धारा 439(1क) जमानत याचिकाओं व अन्य समान मामलों पर विचार करने के चरण में न्यायालय को पीड़िता की बात सुनने की आवश्यकता होती है; तथा उस प्रावधान में कहीं भी यह आवश्यक नहीं है कि पीड़िता को ऐसी कार्यवाही में एक पक्षकार बनाया जाए।

27. आवश्यक सिद्धांत यह है कि एक आपराधिक अपराध समग्र रूप से समाज के अपमान का रंग ले लेता है, जिसके लिए अपराधी को बहुत गंभीर परिणाम भुगतने पड़ सकते हैं, जिसमें जेल की सजा या यहां तक कि मृत्युदंड भी शामिल है। यही कारण है कि, पुलिस एवं सरकारी अभियोजक सहित राज्य प्रशासन आपराधिक अपराधियों की जांच एवं अभियोजन चलाने में लगी हुई है; एवं यह सरकारी अभियोजक है, जो मामले के लिए जिम्मेदार या उत्तरदायी है। सरकारी अधिवक्ता के अनुसार, राज्य साक्षियों को बुलाता है, मामले पर प्रतिविरोध करता है एवं बहस करता है, तथा किसी अभियुक्त के खिलाफ कार्यवाही वापस लेने की मांग भी कर सकता है।
28. आपराधिक अपराधों पर अभियोजन चलाने हेतु राज्य को उत्तरदायी बनाने के गुणागुण अन्य बातों के साथ-साथ यह है कि अपराध के वास्तविक कारित होने से दूर होने के कारण, अपराध के कारित होने तथा इसे कारित करने वाले अपराधी के संबंध में सत्यता की खोज के प्रति राज्य को निष्पक्ष माना जाता है; जिस कारण से यदि किसी मामले में पीड़िता पक्षद्रोही हो जाए तथा अभियुक्त की बेगुनाही का समर्थन करे, फिर भी राज्य की ओर से अभियोजन जारी रखा जा सकता है एवं न्यायालय अभियुक्त को दोषी ठहरा सकता है। वास्तव में, किसी अपराध का शिकार व्यक्ति दोषसिद्धि पर प्रबल जोर दे सकता है, इसी कारण से, लोक अभियोजक के माध्यम से राज्य से निष्पक्षता की अपेक्षा की जाती है, वह मामले को किसी भी तरह से

दोषसिद्धि सुनिश्चित करने की चिंता किए बिना अनासक्ति के साथ प्रस्तुत करेगा।

29. हालांकि, पीड़िता की भूमिका यहां तक कि सुनवाई का अधिकार दिए जाने पर भी संदर्भ एवं आपराधिक कार्यवाही के चरण के साथ भिन्न होनी चाहिए। उदाहरणार्थ, जमानत कार्यवाही के संबंध में, पीड़ित प्रासंगिक तथ्यों को स्पष्ट करने में न्यायालय की सहायता कर सकता है जैसे कि पीड़िता या अन्य साक्षियों को मिली कोई धमकी; या साक्ष्य से छेड़छाड़ की संभावना; या यहां तक कि फरार होने का खतरा भी हालांकि, हिरासत में पूछताछ की आवश्यकता का निर्धारण करने में पीड़िता की कोई भूमिका नहीं होगी, जो कि जांच अभिकरण का काम होगा।
30. दोहराने के लिए, प्रतिनिधित्व करने एवं सुने जाने का अधिकार आपराधिक कार्यवाही में पक्षकार होने के अधिकार या दायित्व से भिन्न है।
31. वास्तव में, ऐसे समय हो सकते हैं जब एक पीड़िता न्यायालय के समक्ष सुनवाई की मांग नहीं कर सकता है, तथा एक पीड़िता को कार्यवाही में एक पक्षकार बना सकता है, उन्हें उपस्थित होने एवं "बचाव" करने हेतु अनिवार्य कर सकता है, इसलिए बोलने के लिए, विभिन्न कार्यवाही जो राज्य या अभियुक्त शुरू कर सकते हैं जिसमें पीड़िता अतिरिक्त विपत्ति एवं पीड़ा का विषय बन सकती है।
32. एक्स बनाम महाराष्ट्र राज्य व अन्य के वर्तमान निर्णयों में, सर्वोच्च न्यायालय ने अपनी रजिस्ट्री को यह सुनिश्चित करने हेतु निर्देश जारी किए

थे कि संवेदनशील मामलों में, "... यदि याचिका में अभियोक्त्री का नाम प्रकट किया गया है तो उस मामले को उचित आदेशों हेतु न्यायालय के समक्ष रखे जाने से पूर्व नाम को संशोधित करने हेतु विद्वान अधिवक्ता को वापस कर दिया जाए।" एक अन्य मामले में, सत्र न्यायालय के निर्णय में पीड़िता के नाम का उल्लेख किए जाने पर आपत्ति जताते हुए, वि.अनु.या. (आप) सं. 4540/2021 में **बीरबल कुमार निषाद बनाम छत्तीसगढ़ राज्य** के दिनांक 30.06.2021 के अपने आदेश में, सर्वोच्च न्यायालय ने पीड़ितों के नाम गोपनीय रखने की आवश्यकता पर टिप्पणी करते हुए कहा है कि "...यह सुस्थापित है कि वर्तमान जैसे मामलों में, किसी भी कार्यवाही में पीड़िता के नाम का उल्लेख नहीं किया जाना चाहिए। हमारा मानना है कि सभी अधीनस्थ न्यायालय भविष्य में ऐसे मामलों से निपटते समय सावधान रहेंगे।"

33. पूर्वगामी चर्चा के परिप्रेक्ष्य में, यह न्यायालय निम्नलिखित निष्कर्ष निकालने के लिए प्रेरित होता है, जिससे यह स्पष्ट हो गया है कि यह यौन अपराधों से संबंधित या उद्भूत होने वाले आपराधिक मामलों तक ही सीमित है।

3.1. विधि में पीड़िता को अभियोजित किए जाने की कोई आवश्यकता नहीं है, अर्थात् पीड़िता को किसी भी आपराधिक कार्यवाही में एक पक्षकार बनाने की, चाहे वह राज्य द्वारा या अभियुक्त द्वारा संस्थित की गई हो;

33.2 *जगजीत सिंह (पूर्वोक्त)* मामले में सर्वोच्च न्यायालय के आदेश के अनुसार, एक पीड़ित के पास अब सभी आपराधिक कार्यवाही में अकाट्य भागीदारी का अधिकार है, जिसके संबंध में वह व्यक्ति पीड़ित है, लेकिन यह अपने आप में एक पीड़ित को एक अपराधी के रूप में अभियोजित करने का कोई कारण नहीं है। ऐसी किसी भी कार्यवाही में पक्षकार, जब तक अन्यथा विधि में विशेष रूप से ऐसा प्रावधान न किया गया हो; दं.प्र.सं. की धारा 439(1क) में आदेश दिया गया है कि पीड़ित को जमानत से संबंधित कार्यवाही में सुना जाए, हालांकि यह आवश्यक नहीं है कि पीड़ित को जमानत याचिकाओं में एक पक्षकार के रूप में शामिल किया जाए;

33.3. *जगजीत सिंह (पूर्वोक्त)* में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के आलोक में, दं.प्र.सं. की धारा 439(1क) को अब पीड़ित के सुनवाई के अधिकार को उन याचिकाओं में भी शामिल करने के लिए विस्तारित किया जाना चाहिए जहां एक अभियुक्त अग्रिम जमानत चाहता है; एक सिद्धदोष दंड के निलंबन, पैरोल, फरलो, या इस तरह की अन्य अंतरिम राहत चाहता है;

33.4. किसी भी अस्पष्टता को दूर करने हेतु, हालांकि दं.प्र.सं. की धारा 439(1क) सुनवाई के समय "इतिला देने वाले व्यक्ति की उपस्थिति" को अनिवार्य बनाता है, जो स्पष्ट रूप से अनिवार्य है तथा वह पीड़ित का अधिकार है, चाहे इतिला देने वाला व्यक्ति या अन्य अधिकृत

प्रतिनिधि के माध्यम से, मामले में प्रभावी ढंग से सुना जाए। यदि आवश्यक हो, तो पीड़ित का प्रतिनिधित्व करने में सहायता के लिए विधिक सहायता अधिवक्ता नियुक्त किया जा सकता है; तथा पीड़ित या उनके प्रतिनिधि की केवल शोभाप्रद उपस्थिति, उन्हें सुनवाई का प्रभावी अधिकार दिए बिना, पर्याप्त नहीं होगी।

34. इसके अलावा, उपरोक्त के अनुसरण में, यह न्यायालय निम्नलिखित निर्देश जारी करता है:

34.1. यह निर्देशित किया जाता है कि रजिस्ट्री को यौन अपराधों से संबंधित सभी फाइलिंग की सावधानीपूर्वक जांच करनी चाहिए, ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि अभियोक्त्री/पीड़िता/उत्तरजीवी की गुप्तता एवं गोपनीयता को हर हाल में बनाए रखा जाए;

34.2. अधिक विशिष्ट होने हेतु, उपरोक्त गोपनीयता बनाए रखने के लिए, निम्नलिखित कार्य किए जाने चाहिए:

34.2.1. अभियोक्त्री/पीड़िता/उत्तरजीवी के नाम, माता-पिता, पता, सोशल मीडिया क्रेडेंशियल्स एवं तस्वीरों का प्रकटीकरण पक्षकारों के ज्ञापन सहित न्यायालय में की गई फाइलिंग में नहीं किया जाना चाहिए;

34.2.2. हालांकि, यदि उपरोक्त दिशानिर्देश का निष्ठा से पालन किया जाता है, तो पहचान संबंधी विवरण वाद सूची में दिखाई नहीं देंगे, अत्यधिक सावधानी बरतते हुए,

रजिस्ट्री को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि ऐसे विवरण किसी भी तरह से न्यायालय की वाद सूची में प्रतिबिंबित न हों;

34.2.3. अभियोक्त्री/पीड़िता/उत्तरजीवी के परिवार के सदस्यों का नाम, माता-पिता व पता - जिनके द्वारा अभियोक्त्री / पीड़िता / उत्तरजीवी की पहचान की जा सकती है - फाइलिंग में प्रकटीकरण नहीं किया जाना चाहिए, पक्षकारों का ज्ञापन, भले ही वे मामले में अभियुक्त हों, चूंकि इससे अप्रत्यक्ष रूप से अभियोक्त्री / पीड़िता / उत्तरजीवी की पहचान हो सकती है;

34.2.4. चूंकि प्राथमिकी, आरोप पत्र, विचारण न्यायालय के समक्ष कार्यवाही व अन्य समान अभिलेखों से अभियोक्त्री / पीड़िता / उत्तरजीवी के पहचान संबंधी विवरणों को हटाना, ऐसे दस्तावेज तैयार करने वाले अधिकारियों / न्यायालय का कर्तव्य एवं दायित्व है; तथा जहां तक इस न्यायालय के समक्ष कार्यवाही का प्रश्न है, उनमें से प्रत्येक दस्तावेज में पूर्ण संशोधन करना संभव नहीं हो सकता है, यह भी निर्देशित किया जाता है कि इस न्यायालय में दायर यौन अपराधों से संबंधित मामलों की फाइलें / पेपर-बुक / ई-पोर्टफोलियो अवश्य होना चाहिए। ऐसे व्यक्तियों की पहचान संबंधी प्रमाण-पत्रों के उचित सत्यापन के बाद, मुकदमे के पक्षकारों, अभियोक्त्री / पीड़िता / उत्तरजीवी एवं उनके संबंधित अधिवक्ता के अलावा किसी अन्य व्यक्ति को प्रदान नहीं किया जाएगा;

- 34.2.5. फाइलिंग की जांच के चरण में, यदि रजिस्ट्री को पता चलता है कि किसी अभियोक्त्री / पीड़िता / उत्तरजीवी की पहचान का प्रकटीकरण पक्षकारों के ज्ञापन में या कहीं और फाइलिंग में किया गया है, तो ऐसी फाइलिंग को स्वीकार किए जाने से पहले अपेक्षित संशोधन हेतु फाइल करने वाले अधिवक्ता को वापस कर दिया जाना चाहिए;
- 34.2.6. उच्च न्यायालय के भीतर भी किसी अन्य व्यक्ति या अभिकरण को पहचान विवरण के प्रचार प्रसार को रोकने के लिए, यह आगे निर्देशित करता है कि अभियोक्त्री / पीड़िता / उत्तरजीवी को दी जाने वाली सभी सेवाएं केवल दिनांक 24.09.2019 के व्यवहार दिशानिर्देशों के अनुसार जांच अधिकारी के माध्यम से होंगी तथा *आदेशिका तामील अभिकरण (प्रोसेस सर्विंग एजेंसी)* के माध्यम से नहीं, हालांकि याचिका या आवेदन की एक प्रति अभियोक्त्री / पीड़िता / उत्तरजीवी को दी जानी चाहिए;
- 34.2.7. उपरोक्त रूप से तामील किये जाने के लिए जांच अधिकारी को 'सादे कपड़ों' में रहना चाहिए ताकि किसी भी अनुचित ध्यान को आकर्षित करने से बचा जा सके;
- 34.2.8. इसके अलावा, जांच अधिकारी को अभियोक्त्री / पीड़िता / उत्तरजीवी को यह भी सूचित करना चाहिए कि उन्हें *दिल्ली घरेलू कामकाजी महिला फोरम बनाम भारत संघ व अन्य* मामले में सर्वोच्च न्यायालय के आदेश के

अनुसार मुफ्त विधिक सहायता / प्रतिनिधित्व का अधिकार है;

- 34.2.9. यदि पक्षकार न्यायालय में अभियोक्त्री / पीड़िता / उत्तरजीवी के किसी भी पहचान संबंधी विवरण को उद्धृत करना चाहते हैं, जिसमें तस्वीर या सोशल मीडिया पत्राचार आदि शामिल हैं, तो ऐसा पक्षकार इसे 'सीलबंद लिफाफे' में न्यायालय में ला सकता है; या इसे 'सीलबंद लिफाफे' या 'पास-कोड लॉक' इलेक्ट्रॉनिक फोल्डर में दाखिल करें तथा पास-कोड केवल संबंधित कोर्ट मास्टर के साथ साझा करें।
- 34.3. पूर्वगामी दिशानिर्देशों का उद्देश्य सर्वांगीण होना नहीं है; तथा संवीक्षा के चरण में, रजिस्ट्री से अपेक्षा की जाती है कि वह किसी दिए गए मामले की किसी भी विशिष्टताओं पर *निपुण सक्सेना* (पूर्वोक्त) में सर्वोच्च न्यायालय के दिशानिर्देशों को ईमानदारी से लागू करने के उद्देश्य एवं आशय से अपना ध्यान आकर्षित करे ।
- 34.4. अंततः, उपरोक्त जारी दिशानिर्देशों को इस न्यायालय के महानिबंधक द्वारा लिखित निर्देशों / नोट / अधिसूचना के माध्यम से संक्षेपित किया जा सकता है; तथा प्रधान जिला एवं सत्र न्यायाधीश दिल्ली को उनके संबंधित अधिकार क्षेत्र में एवं पुलिस आयुक्त दिल्ली को परिचालित किया जाएगा।

- 34.5. महानिबंधक को निर्देशित किया जाता है कि वह इस निर्णय को *निपुण सक्सेना* (पूर्वोक्त) के निर्देशों के अनुरूप उचित व्यवहार दिशानिर्देश या नोटिस या अधिसूचना तैयार करने हेतु माननीय मुख्य न्यायाधीश का ध्यान आकर्षित करायें, जैसा उचित हो।
35. यह न्यायालय न्याय मित्र के रूप में विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता सुश्री रेबेका एम. जॉन द्वारा इस मामले में प्रदान की गई अमूल्य सहायता हेतु उनकी सराहना करता है।
36. प्रस्तुत प्रश्न का निपटान उपरोक्त शर्तों के अनुसार किया जाता है।

न्या. अनूप जयराम भंभानी

अप्रैल 19,2023/डीएस

(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)

अस्वीकरण : देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा। समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।